आर्थिक वृद्धि की संभावनाएं और भारत की नीतिगत अनिवार्यताएं*

के.सी. चक्रवर्ती

श्री हर्षवर्धन नेवटिया, अध्यक्ष, सीआइआइ-सुरेश नेवटिया सेंटर ऑफ एक्सीलेंस फॉर लीडरशीप, विशिष्ट अतिथिगण, देवियो और सज्जनो। प्रारंभ में मैं आयोजकों को धन्यवाद देना चाहता हूं कि उन्होंने मुझे यहां एक ऐसे विषय पर संबोधित करने के लिए आमंत्रित किया जो सामयिक होने के साथ-साथ काफी महत्त्वपूर्ण भी है। मेरा लक्ष्य भारत की आर्थिक वृद्धि का एक वास्तविक मूल्यांकन प्रस्तुत करने के साथ-साथ उन लक्ष्यों को हासिल करने की दिशा में नीतिगत अनिवार्यताओं का भी उल्लेख करना है जो हमारी पहुंच के अंदर हैं। साथ ही, हमें यह भी सुनिश्चित करना है कि घाटी पार करते समय हम कहीं खड़ी चट्टान से गिर न पड़ें। हमारी सफलता इस बात पर निर्भर करेगी कि हम समाज के हर स्तर पर नई सोच तथा लक्ष्य केंद्रित नेतृत्व के विकास को किस प्रकार बढ़ावा देते हैं।

2. आज के इस 'नेतृत्व पर द्वितीय राष्ट्रीय सम्मेलन' में दर्शक दीर्घा में और मंच पर कई सफल कारोबारी लीडर बैठे हैं। भारतीय उद्योग परिसंघ (सीआइआइ) इस बात पर विश्वास करता है कि वहनीय वृद्धि तथा प्रतिस्पर्धात्मकता के भारत के मिशन में सफल होने की दिशा में नेतृत्व तथा मानव संसाधन के प्रबंधन की गुणवत्ता काफी महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाती है और कारोबार में शीर्ष पर बने रहने के लिए यह एक महत्त्वपूर्ण आवश्यकता है। 'सीआइआइ-सुरेश नेवटिया सेंटर ऑफ एक्सीलेंस फॉर लीडरशीप' नेतृत्व के विकास के जरिए तथा वृद्धि की तेज गति को बनाए रखने के लिए नीतिगत अनिवार्यताओं से जुड़े ऐसे विषयों पर चर्चाओं के माध्यम से काफी बड़े पैमाने पर वृद्धि के लक्ष्यों का समर्थन कर रहा है। मुझे विश्वास है कि यह संस्थान शीघ्र ही वैश्विक स्तर पर कारोबारी नेतृत्व का विकास करने वाले एक ऐसे प्रख्यात अग्रणी संस्थान का रूप ले लेगा जो न केवल भारत में बल्कि उभरते बाजार वाले देशों में भी अपनी सेवाएं देगा।

3. आज का मेरा भाषण दो भागों में होगा। पहले भाग में मैं इन विषयों पर ध्यान केंद्रित करूंगा: (1) अस्सी के दशक से आर्थिक वृद्धि में हुई बढ़ोतरी तथा 2003-04 से 2007-08 के दौरान इसमें हुई और प्रगति, (2) संकट का प्रभाव और उसके बाद V आकार वाली बहाली, (3) विभिन्न गति से बहाली की ओर बढ़ रहे विश्व में भारत की अल्पावधि की वृद्धि संभावनाएं तथा चुनौतियां तथा (4) भारत की दीर्घावधि वृद्धि की संभावनाएं। दूसरे भाग में इस बात पर विचार किया जाएगा कि वृद्धि की सफलता तथा अल्पावधि में वृद्धि की उल्लेखनीय संभावनाओं के बावजूद भारत की वृद्धि की वहनीयता महत्त्वपूर्ण रूप से निम्नलिखित तीन बातों पर निर्भर करेगी: (1) वृद्धि की प्रक्रिया को अधिक समावेशी बनाने की हमारी क्षमता, (2) उन्नत अभिशासन, तथा (3) समाज के हर स्तर पर नेतृत्व का विकास। इन सभी क्षेत्रों में कुछ कमियां हैं जिनके चलते भारत अपनी दीर्घावधि वृद्धि की संभावनाओं का पूरी तरह से दोहन नहीं कर पा रहा है। तथापि, भारत के पास ऐसी संभावनाएं हैं जिनकी सहायता से वह अपनी उच्च वृद्धि दर में और इजाफा कर सकता है।

उच्च वृद्धि के दौर में प्रवेश

4. 1980-81 से भारतीय अर्थव्यवस्था में उच्च वृद्धि दर का दौर तब प्रारंभ हुआ जब भारतीय अर्थव्यवस्था ने 'हिंदू वृद्धि दर' के रूप में प्रचलित 3.5 प्रतिशत की सीमा को तोड़ा जो भारतीय अर्थव्यवस्था के निम्नस्तरीय संतुलन की बाध्यता को दर्शाता था। अस्सी के दशक में भारतीय अर्थव्यवस्था की औसत वास्तविक जीडीपी वृद्धि दर सुधरकर 5.6 प्रतिशत हो गई जो कि 50 के दशक के औसतन 3.6 प्रतिशत, 60 के दशक के 4.0 प्रतिशत तथा 70 के दशक के 2.9 प्रतिशत से बहुत अधिक है।

5. किन कारणों से इस तरह का ढांचागत बदलाव हुआ? मेरे विचार में चार कारक विशेष रूप से महत्त्वपूर्ण रहे। पहला, 80 के दशक की उच्च वृद्धि में उद्योग को लाइसेंस से मुक्त करने तथा व्यापार उदारीकरण की नीति ने मदद की। इस अवधि के दौरान खनन, पंजीकृत विनिर्माण तथा बिजली के क्षेत्र में स्पष्ट सुधार देखा गया। दूसरा, उच्च राजकोषीय घाटे के कारण वृद्धि दर में तेजी तो आई, परंतु राजकोषीय स्थिति के बिगड़ने से दोनों घाटे बढ़ गए और खाड़ी संकट के प्रभाव के चलते 1991 में भुगतान संतुलन का संकट आया। 80 के दशक में सकल राजकोषीय घाटा (जीएफडी) औसतन 6.7 प्रतिशत रहा जबकि 70 के दशक में यह केवल 3.8 प्रतिशत था। इसके कारण भारतीय रिज़र्व बैंक द्वारा केंद्र को दिया गया कर्ज 70 के दशक में जीडीपी का केवल 1 प्रतिशत था जबकि बाद में यह बढ़कर जीडीपी का 2.1 प्रतिशत हो गया जिससे घाटे के मौद्रीकरण में वृद्धि हुई और इस प्रकार मौद्रिक नीति की सक्षमता पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ा। तीसरा, 70 के दशक के उत्तरार्ध से अर्थव्यवस्था में बचत और निवेश की दरें बढ़ने लगीं जिसने 80 के दशक में उच्चतर वृद्धि के लिए एक आधार तैयार किया।

डॉ. के.सी. चक्रवर्ती, उप गवर्नर, भारतीय रिज़र्व बैंक का सीआइआइ-सुरेश नेवटिया सेंटर ऑफ एक्सीलेंस फॉर लीडरशीप, साल्ट लेक, कोलकाता में 10 दिसंबर 2010 को आयोजित नेतृत्व पर राष्ट्रीय सम्मेलन की महासभा में दिया गया उद्घाटन भाषण। इस भाषण को प्रस्तुत करने में दी गई सहायता के लिए डॉ. एम.के. सागर के प्रति कृतज्ञता व्यक्त की जाती है।

1974-75 में सकल देशी बचत की दर 15.7 प्रतिशत थी जो 1978-79 में सुधरकर 21.2 प्रतिशत हो गई जो उस अवधि के दौरान परिवारों की वित्तीय बचत दर 3 प्रतिशत से बढ़कर 6 प्रतिशत हो जाने की वजह से थी। उसी प्रकार सकल निवेश की दर 16.5 प्रतिशत से सुधरकर 21.3 प्रतिशत हो गई। तथापि, 80 के दशक में 1986-87 तक बचत तथा निवेश दरें पहले जैसी बनी रहीं क्योंकि 1982-83 के बाद विशेष रूप से सार्वजनिक क्षेत्र की बचतों में गिरावट आ गई थी। चौथा, दशक के दौरान ढांचागत बदलाव ने गति पकड़ी, व्यापार, होटल तथा रेस्तरां, परिवहन, संचार क्षेत्रों में 6 प्रतिशत तक की वार्षिक वृद्धि हुई, स्थावर संपदा क्षेत्र ने 7 प्रतिशत तथा बैंकिंग तथा बीमा क्षेत्र ने 10.6 प्रतिशत की भारी वृद्धि दर्ज की। इसके परिणामस्वरूप पिछले वर्षों की प्रवृत्ति के विपरीत गैर कृषि क्षेत्र में, जिसमें सामान्यतः 4-5.5 प्रतिशत के दायरे में वृद्धि हो रही थी, 80 के दशक के उत्तरार्ध में 7.1 प्रतिशत की वृद्धि हुई।

6. 80 के दशक में उच्च वृद्धि के जिस दौर की शुरुआत हुई थी उसकी गति अगले तीन दशकों तक बनी रही। 90 के दशक में भी 80 के दशक की गति बरकरार रही और अगले दशक में इसमें और तेजी आई। 90 के दशक में हुई 5.7 की प्रतिशत की औसत वृद्धि दर सांख्यिकीय दृष्टि से 80 के दशक की दर से भिन्न नहीं थी, परंतु गुणात्मक दृष्टि से यह प्रतिशत इस मायने में बेहतर था कि इस दौरान राजकोषीय घाटे को रोकने का प्रयास किया गया। 90 के दशक में जीएफडी/ जीडीपी अनुपात औसतन 5.9 प्रतिशत पर निम्नतर था। भुगतान संतुलन के चालू खाते में भी उल्लेखनीय सुधार दिखाई दिया तथा इस अवधि में भारत को वैश्वीकरण के लाभ मिलने लगे थे। तथापि इस अवधि में औद्योगिक वृद्धि की दर निराशाजनक रही तथा खनन, पंजीकृत विनिर्माण तथा बिजली क्षेत्र की वृद्धि दर में गिरावट आने के चलते इसकी औसत वृद्धि दर 5.7 प्रतिशत रही जो कि पिछले दशक की 6.4 प्रतिशत की वृद्धि दर से कम है। 90 के दशक में हुई वृद्धि मुख्यतः सेवा क्षेत्र में हुई वृद्धि से प्रेरित थी तथा भंडारण को छोड़कर सेवाओं के अधिकांश खंडों के कार्यकलापों में उल्लेखनीय वृद्धि होने के कारण इस क्षेत्र में 7.1 प्रतिशत प्रतिवर्ष की वृद्धि हुई।

7. 2000-01से 2009-10 के दशक में वृद्धि के दायरे में और विस्तार हुआ। इस दौरान वास्तविक जीडीपी की वृद्धि दर औसतन 7.3 प्रतिशत रही जिसके चलते जी-20 सदस्य देशों के बीच सबसे तेज गति से वृद्धि दर हासिल करने वाले देशों के बीच भारत का स्थान दूसरा रहा। दशक के दौरान औद्योगिक वृद्धि दर औसतन 6.8 प्रतिशत रही। पंजीकृत विनिर्माण की वृद्धि दर 8.7 प्रतिशत रही, हालांकि बिजली क्षेत्र की वृद्धि दर में गिरावट आई। सेवा क्षेत्र ने 8.0 प्रतिशत की वृद्धि दर हासिल की परंतु संचार क्षेत्र ने 25.3 प्रतिशत की औसत वृद्धि के साथ सबसे बेहतर प्रदर्शन किया। बैंकिंग तथा बीमा क्षेत्र की वृद्धि दर 10.8 प्रतिशत, निर्माण क्षेत्र की 9.2 प्रतिशत तथा होटल और रेस्तरां क्षेत्र की वृद्धि दर 9.1 प्रतिशत रही। सेवा क्षेत्र में हुई उच्च वृद्धि दर ने अर्थव्यवस्था के ढांचे में और बदलाव ला दिया। निर्माण सहित सेवा क्षेत्र का जीडीपी में योगदान इस समय लगभग 65 प्रतिशत है जबकि योजना अवधि की शुरुआत में यह महज 34 प्रतिशत था। जीडीपी में उद्योग का हिस्सा छह दशक पूर्व के 11 प्रतिशत से लगभग दुगुना होकर 20 प्रतिशत हो गया है जबकि कृषि तथा संबद्ध कार्यकलापों का हिस्सा 55 प्रतिशत से गिरकर लगभग 15 प्रतिशत रह गया है।

संकट का असर तथा V आकार वाली बहाली

8. वैश्विक वित्तीय संकट के कारण वैश्विक विकास में गिरावट आने से पहले 2005-06 से 2007-08 तक तीन वर्षों के दौरान भारतीय अर्थव्यवस्था की वृद्धि दर आश्चर्यजनक रूप से 9.5 प्रतिशत रही। इस संकट से भारत अप्रभावित अथवा डिकपल होकर न रह सका। कपलिंग और डीकपलिंग सिद्धांतों के बावजूद यह स्पष्ट था कि भारत उल्लेखनीय रूप से वैश्वीकृत हो चुका था। वस्तुओं तथा सेवाओं के व्यापार ने जीडीपी में 48 प्रतिशत का योगदान दिया तथा अपनी उच्च वृद्धि दर को बनाये रखने के लिए अर्थव्यवस्था बाहर से आनेवाली बड़ी पूंजी पर उल्लेखनीय रूप से निर्भर रही। अतः वैश्विक वित्तीय संकट का असर पड़ना लाजमी था।

9. भारी देशी मांग के कारण भारत की आघात-सहनीयता, एक सुस्थिर वित्तीय प्रणाली, देशी बचत की उच्च दर, विवेकपूर्ण मौद्रिक नीति तथा एफआरबीएम अधिनियम, 2003 के बाद हुए राजकोषीय सुधार एवं अभूतपूर्व प्रतिचक्रीय राजकोषीय तथा मौद्रिक नीतियों ने भारत को अन्य अधिकांश देशों की तुलना में संकट से उबरने में मदद की। बाद के दो वर्षों में अर्थव्यवस्था की वृद्धि दर में गिरावट आई, फिर भी इसकी वृद्धि दर 2008-09 में 6.7 प्रतिशत तथा 2009-10 में 7.4 प्रतिशत रही। यह सब इस तथ्य के बावजूद हुआ कि औद्योगिक वृद्धि में चक्रीय संशोधन की शुरुआत लीमन ब्रदर्स के विफल होने के बाद वित्तीय संकट के प्रारंभ होने से पहले ही 2008-09 में हो गई थी।

10. इस अवधि के दौरान मौद्रिक नीतिगत कार्रवाई त्वरित तथा बड़े स्तर की थी। रिपो दर को 9 प्रतिशत से 425 आधार अंक घटाकर 4.75 प्रतिशत कर दिया गया। रिवर्स रिपो दर को 6 प्रतिशत से 275 आधार अंक घटाकर 3.25 प्रतिशत कर दिया गया। सीआरआर को 9 प्रतिशत से 400 आधार अंक घटाकर 5 प्रतिशत कर दिया गया। 11 वर्ष बाद पहली बार एसएलआर को 25 प्रतिशत से घटाकर 24 प्रतिशत किया गया। बाजार स्थिरीकरण योजना (एमएसएस) के अंतर्गत प्रतिभूतियों को वापस लेकर, खुला बाजार परिचालन, स्थायी सुविधाओं तथा चलनिधि का समर्थन करनेवाले कतिपय गैर-पारंपरिक उपायों के जरिए भारी मात्रा में चलनिधि उपलब्ध करायी गयी। ये सभी कार्रवाइयां 7 महीनों के अंदर की गईं। ये कार्रवाइयां राजकोषीय उपायों के साथ-

साथ की गईं जिनमें करों में भारी कटौती करना तथा व्यय संबंधी प्रोत्साहन देना शामिल थे। इन कार्रवाइयों ने मौद्रिक-राजकोषीय समन्वय का एक अनूठा दृष्टांत प्रस्तुत किया जिसके चलते न केवल अर्थव्यवस्था की गिरावट को रोकने में मदद मिली बल्कि V आकार वाली बहाली में भी मदद मिली।

11. जून 2009 से औद्योगिक वृद्धि दर में सुधार आया तथा अगस्त 2010 तक यह दर दो अंकों में आ गई। इस बहाली का असर सेवा क्षेत्र में भी दिखाई दिया, यद्यपि मानसून की विफलता के कारण अर्थव्यवस्था को एक नए झटके का सामना करना पड़ा। फिर भी भारतीय अर्थव्यवस्था की आघात-सहनीयता इस बात से स्पष्ट हो रही थी कि सूखे से सर्वाधिक प्रभावित होने के बावजूद उच्चतर ग्रामीण आय तथा ग्रामीण कार्यकलापों में बड़ी मात्रा में विशाखीकरण के चलते कृषि क्षेत्र में 1.2 प्रतिशत की सकारात्मक वृद्धि हुई। बेहतर औद्योगिक वृद्धि दर तथा सेवा क्षेत्र में फिर से बेहतरी आने के चलते 2009-10 की चौथी तिमाही तक उत्पादन में हुई कमी को पूरा किया जा सका तथा इस प्रकार V आकारवाली बहाली की प्रक्रिया पूरी हुई।

वृद्धि की अल्पावधि संभावनाएं तथा चुनौतियां

12. भारत ने इस समय चालू वित्तीय वर्ष की पहली दोनों तिमाहियों में 8.9 प्रतिशत की वृद्धि दर प्राप्त कर ली है। संभावित वृद्धि के विशुद्ध सांख्यिकीय अनुमान के आधार पर यह मामला ऐसा लग सकता है कि वृद्धि की दर संभावना से भी अधिक रही है। तथापि इस बात को समझने की जरूरत है कि पहले के आधार अवधि के आंकड़े निम्नतर होने के कारण वृद्धि का दायरा उच्चतर स्तर पर चला गया है। अनुकूल आधार प्रभाव के समाप्त हो जाने पर अल्पावधि में अर्थव्यवस्था में अवहनीय वृद्धि के बिना वृद्धि दर को आगे बढ़ाना कठिन कार्य होगा। प्रतिकूल आधार प्रभाव के कारण वृद्धि संबंधी आंकड़ों में आगे और मामूली समायोजन होने की संभावना के बावजूद अल्पावधि की वृद्धि संभावनाएं काफी उत्साहजनक हैं। चुनिंदा उद्योगों में क्षमता संबंधी दबाव दिखने भी लगा है। मांग और आपूर्ति की स्थितियों का प्रबंधन करने के साथ-साथ इस बात को ध्यान में रखना महत्त्वपूर्ण है कि मूल्य स्थिरता के साथ-साथ निवेश में भी वृद्धि होती रहे।

13. वर्तमान में ऐसा प्रतीत होता है कि आधार प्रभाव के समायोजन के बाद अर्थव्यवस्था में न तो अनचाही तेजी है और न ही मंदी का रुख है। मुद्रास्फीति का स्तर हालांकि अपेक्षा से अधिक है फिर भी इसमें गिरावट आ रही है। वृद्धि की दर किसी भी ओर झुक सकती है। जहां एक तरफ कतिपय उन्नत अर्थव्यवस्थाओं द्वारा नए सिरे से मात्रात्मक सहूलियत दिए जाने से भविष्य के उत्पादन तथा मुद्रास्फीति की दरों में अंतर के बारे में अनिश्चितता बढ़ गई है तथा अल्पावधि में आस्तियों के मूल्यों में भारी तेजी आ जाने का जोखिम उत्पन्न हो गया है वहीं दूसरी ओर उन्नत अर्थव्यवस्थाओं के केंद्रीय बैंक अल्पावधि मुद्रास्फीति प्रत्याशाओं में वृद्धि लाने का प्रयास कर रहे हैं, परंतु वे दीर्घावधि मुद्रास्फीति प्रत्याशाओं की स्थिरता में कमी लाने का जोखिम भी उठा रहे हैं। इस अनिश्चित वातावरण में हमें सतर्क रहना होगा तथा जरूरत पड़ने पर आगे त्वरित सुधारात्मक कार्रवाई भी करनी होगी। तथापि इस समय बदलाव की दिशा तथा प्रतिक्रिया फलन में आगे दिए जानेवाले तुलनात्मक भार का स्तर अस्पष्ट है। हाल की अवधि में पूंजी प्रवाह का स्तर जज्ब कर लेने की हमारी क्षमता के अनुरूप है परंतु जोखिम प्रबंधन संबंधी व्यवस्था करते समय नीति-निर्माताओं तथा निजी एजेंटों को संभावित उतार-चढ़ाव को ध्यान में रखना होगा। यह कम उल्लेखनीय बात नहीं है कि एक ऐसे विश्व में जहां वैश्विक संतुलन तथा मुद्राओं का आक्रमण (करेंसी वार) जैसे मुद्दे पुनः उभरकर आए हैं, भारत ने किसी उल्लेखनीय हस्तक्षेप तथा पूंजीगत नियंत्रण की असंभव त्रयी का प्रबंधन कर लिया है। कई अर्थों में यह भारतीय अर्थव्यवस्था की परिपक्वता के स्तर को दर्शाता है जो इसकी वृद्धि संबंधी संभावनाओं के लिए अच्छी बात है।

दीर्घावधि वृद्धि की संभावनाएं

14. भारत की दीर्घावधि वृद्धि की संभावनाएं उत्साहजनक हैं परंतु आगे की वृद्धि की संभावना के दायरे के बारे में अनिश्चितता है। 8-9 प्रतिशत प्रति वर्ष की दर से पूंजीगत स्टॉक में हो रही वृद्धि, लगभग 1.9 प्रतिशत प्रति वर्ष की दर से बढ़ता हुआ जनबल तथा प्रति वर्ष 3 प्रतिशत से भी अधिक की दर से बढ़ रही सकल कारक उत्पादकता को देखते हुए भारत की वृद्धि दर 8 प्रतिशत अथवा उससे अधिक हो सकती है। पिछले आंकड़ों के आधार पर तैयार की गई पारंपरिक समय श्रृंखला पद्धति से संकेत मिलता है कि भारतीय अर्थव्यवस्था की संभावित वृद्धि दर 7.5-8 प्रतिशत रहेगी। तथापि मुद्दा यह है कि किस प्रकार भारत आगे आनेवाले दिनों में 10 प्रतिशत की वृद्धि दर के दायरे में आ जाएगा। अल्पावधि में इस लक्ष्य को प्राप्त करना हमें कठिन लग सकता है परंतु हमें इस बात को भी ध्यान में रखना होगा कि समाज की दीर्घावधि निर्वहनीयता को बनाए रखने के लिए हमें अगले 20 वर्ष तक 10 प्रतिशत की दर से बढ़ते रहना होगा। मुद्दा यह नहीं है कि हम इस लक्ष्य को प्राप्त कर सकते हैं या नहीं, बल्कि यह है कि हमें इसे साकार बनाने के लिए समग्र रूप में प्रयास करना चाहिए। हमें इस बात को भी ध्यान में रखना होगा कि वृद्धि की प्रकृति समावेशी व कार्य-अभिमुख हो, अन्यथा इसे बनाए रखना संभव नहीं होगा। तभी हम नई पीढ़ी की बढ़ती आकांक्षाओं को पूरा करने में सफल होंगे। हमारे सामने यह भी जोखिम है कि वृद्धि दर के इस स्तर से कम हो जाने पर सामाजिक सौहार्द में अकस्मात विघ्न आ सकता है। हमारे नेतृत्व के सामने जीवन के विभिन्न स्तरों से जुड़ी यह एक बड़ी चुनौती है। ऐसी स्थिति में नीतिगत अनिवार्यताओं की भूमिका महत्त्वपूर्ण हो जाती है जो इस कठिन लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए आवश्यक है।

15. भारत के लिए एक अतिरिक्त लाभ की स्थिति यह है कि इसके पास एक बड़ा जनबल है जिसकी मदद से वृद्धि की आकांक्षाओं को आगे ले जाया जा सकता है। सन 2000 में भारत में 20-59 आयु वर्ग की कार्यक्षम जनसंख्या 49 प्रतिशत थी जो 2025 में बढ़कर 55 प्रतिशत तथा 2050 तक यह 53 प्रतिशत के उच्च स्तर पर भी बनी रह सकती है। सन 2025 में वृद्ध आश्रित लोगों का प्रतिशत महज 12 प्रतिशत हो सकता है। यह स्थिति ओईसीडी के देशों की बढ़ती उम्र वाली आबादी के विपरीत है जहां आश्रित लोगों का अनुपात तेजी से बढ़ रहा है। जापान में 2005 में आश्रित लोगों का अनुपात लगभग 30 प्रतिशत था जिसके 2050 तक बढ़कर 70 प्रतिशत से अधिक हो जाने की संभावना है। यूरोपीय संगठन के देशों में भी वृद्ध व्यक्तियों की निर्भरता के अनुपात में तेजी से वृद्धि हो रही है। इन देशों में भी यह अनुपात वर्तमान के 26 प्रतिशत से बढ़कर 2050 तक 53 प्रतिशत हो जाने का अनुमान है।

16. भारत की वृद्धि की गाथा को त्वरित गति से हो रहे शहरीकरण का लाभ मिलने की संभावना है। कुल आबादी में शहरी आबादी का हिस्सा भी तेजी से बढ़ रहा है। 1971 में यह हिस्सा 20 प्रतिशत से कम था परंतु 2001 तक यह बढ़कर 29 प्रतिशत हो गया तथा 2016 तक इसके बढ़कर 37 प्रतिशत हो जाने की संभावना है। परंतु जनसांख्यिकीय लाभांश तथा शहरीकरण दोनों में अपार संभावनाएं हैं परंतु ये डरावनी स्थितियां भी पैदा कर सकते हैं, यह इस पर निर्भर करता है कि हम क्या करते हैं। उदाहरणस्वरूप, 20 मिलियन भारतीयों के प्रतिवर्ष जनबल के रूप में शामिल होने की संभावनाएं हैं परंतु हम उच्च वृद्धि के पिछले तीन दशकों के दौरान प्रति वर्ष लगभग 7 मिलियन लोगों को ही काम मुहैया करा पा रहे हैं। हमें इस बात पर ध्यान केन्द्रित करना चाहिए कि हम जनसांख्यिकीय तथा शहरीकरण का लाभ किस प्रकार उठा सकते हैं। इसके लिए अधिक संसाधनों का आबंटन करना होगा तथा शिक्षा, स्वास्थ्य, शहरी तथा ग्रामीण ढांचागत विकास जैसे संसाधनों का सृजन करने वाले कार्यकलापों को बढ़ाना होगा। इसके लिए ऊर्जा की मांग और आपूर्ति के बीच की कमी को पाटना होगा, साथ ही नवीकरणीय ऊर्जा के क्षेत्र में निवेश करने के साथ-साथ खनिजों के दोहन को बढ़ाना होगा। हमें उन कारकों को दूर करने के लिए अधिक प्रयास करना होगा जिनसे भविष्य की वृद्धि प्रभावित हो सकती है। संभावित अथवा समष्टि आर्थिक रूप से वहनीय वृद्धि दर को बढ़ाने के लिए किस प्रकार के नीतिगत उपाय किये जाने चाहिए? जैसा कि मैंने पहले उल्लेख किया है, मैं यहां नीतिगत उपायों के तीन समूहों की चर्चा करूँगा।

वृद्धि की प्रक्रिया को अधिक समावेशी बनाना

17. पिछले दशक में भारत की वृद्धि की गाथा उल्लेखनीय रही है। तथापि वृद्धि की प्रक्रिया पर्याप्त समावेशी नहीं थी। ऐसे कई संकेतक हैं जिनसे वर्तमान वृद्धि की प्रक्रिया से हमें संतुष्टि नहीं मिलती। संयुक्त राष्ट्र विकास कार्यक्रम (यूएनडीपी) के मानव विकास सूचकांक (एचडीआइ), 2010 के अनुसार 169 देशों के बीच भारत का स्थान 119वां था जो कि स्पष्टतः भारत की आर्थिक सुदृढ़ता के अनुरूप नहीं है। मलेशिया, रूस, चीन, श्रीलंका, थाईलैंड, फिलीपिन्स, इंडोनेशिया तथा वियतनाम सहित उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाओं के हमारे लगभग सभी प्रतिस्पर्धी देशों की एचडीआइ का क्रमांक हमसे बेहतर है। 1980 में 95 देशों के बीच भारत का क्रमांक 77वां था तथा 1990 में 118 देशों के बीच हमारा क्रमांक 95वां था, जिससे स्पष्ट होता है कि भारत की तुलनात्मक स्थिति में वर्षों के दौरान कुछ अधिक सुधार नहीं हुआ है। यदि हम शिक्षा पर जीडीपी के 3.5 प्रतिशत से भी कम व्यय के साथ 142 देशों के बीच हमारे 117वें स्थान की तुलना शिक्षा पर जीडीपी का 14 प्रतिशत खर्च करने वाले लेसोथो तथा क्यूबा जैसे देशों तथा इस मद में 10 प्रतिशत खर्च करने वाले बोत्सवाना के बारे में विचार करें तो यह तथ्य हमें आश्चर्यजनक नहीं लगेगा। सार्वजनिक स्वास्थ्य सेवाओं पर हम केवल एक प्रतिशत ही व्यय करते हैं तथा एचडीआइ संकेतकों के अनुसार 188 देशों के बीच हमारा स्थान 181वां है जो निराशाजनक है। किरिबाती तथा मार्शल द्वीप जैसे छोटे देश इस मद पर जीडीपी का 14 प्रतिशत व्यय करते हैं जबकि क्यूबा 9 प्रतिशत करता है। ओईसीडी के अधिकांश देश सार्वजनिक स्वास्थ्य सेवाओं पर 6-9 प्रतिशत व्यय करते हैं।

18. त्वरित वृद्धि का असर गरीबी पर पड़ा है परंतु उतना नहीं जितना कि पड़ना चाहिए। हमारी आबादी का एक चौथाई से भी अधिक हिस्सा गरीबी रेखा के नीचे है। राष्ट्रीय प्रतिदर्श सर्वेक्षण (एनएसएस) के 61वें दौर के अनुसार 2004-05 में गरीबी का अनुपात 27.5 प्रतिशत था जिसमें से ग्रामीण क्षेत्रों में यह अनुपात 28.3 प्रतिशत था तो शहरी क्षेत्रों में 25.7 प्रतिशत था। तथापि 1993-94 के अखिल भारतीय स्तर के 36.0 प्रतिशत की तुलना में गरीबी के अनुपात में सुधार परिलक्षित होता है क्योंकि उस दौरान ग्रामीण क्षेत्र में यह अनुपात 37.3 प्रतिशत तथा शहरी क्षेत्रों में 36 प्रतिशत था। क्रयशक्ति समता (पीपीपी) के अनुसार भारत की आबादी के 42 प्रतिशत की दैनिक आय 1.25 अमरीकी डालर से भी कम है। कुछ आकलनों के अनुसार देश की संपदा का आधे से भी अधिक हिस्सा केवल 10 प्रतिशत लोगों के पास है। तथापि भारत का आय गिनी गुणांक 36.8 प्रतिशत है जो कई उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाओं की तुलना में बेहतर है। एनएसएस के हाल के दौर के सर्वेक्षण के अनुसार चालू दैनिक कार्यकलाप की स्थिति के आधार पर 2007-08 में हमारी बेरोजगारी की दर 8 प्रतिशत थी। भारत की स्वास्थ्य तथा शिक्षा संबंधी सांख्यिकी विकासशील देशों की तुलना में भी निराशाजनक है।

19. समावेशी वृद्धि की प्रक्रिया आय के पुनः आबंटन से भी आगे तक जाती है। इसमें दीर्घावधि वृद्धि का ढांचा शामिल है ताकि यह

सुनिश्चित किया जा सके कि वृद्धि से मिलने वाले लाभ से आबादी का एक हिस्सा अलग-थलग न पड़ जाए। यह प्रक्रिया गरीबी न्यूनीकरण की प्रक्रिया से आगे तक जाती है और मेरे विचार में इसके चार स्तंभ हैं - (1) स्वास्थ्य, शिक्षा तथा कौशल-निर्माण के जरिए गरीबों का सशक्तीकरण, (2) गरीबों को संस्थागत वित्त तक की पहुंच में सुधार लाकर वित्तीय समावेशन करना, (3)खाद्य तथा पौष्टिक तत्वों का अधिकार एवं (4) विशेष रूप से आवास जैसे आस्ति निर्माण जिनमें पानी, बिजली तथा स्वच्छता संबंधी व्यवस्थाएं हों ताकि गरीबों को आश्रय स्थल मिल सके तथा अपने स्थान पर अथवा आस-पास कार्य करके आय के एक नियमित स्रोत के सृजन के जरिए वे समुचित जीवनोपार्जन सुनिश्चित कर सकें।

20. मेरे विचार में वित्तीय समावेशन समावेशी वृद्धि के लिए जरूरी है। वित्तीय समावेशन की तेज गति के बिना भारत की उल्लेखनीय वृद्धि की गाथा को जारी नहीं रखा जा सकता। रिज़र्व बैंक द्वारा वित्तीय समावेशन को सुकर बनाने के लिए कई कदम उठाए गए हैं जिनमें से कुछ इस प्रकार हैं : प्राथमिकताप्राप्त क्षेत्र उधार के लिए लक्ष्य का निर्धारण, स्वयं सहायता समूहों (एसएचजी) के साथ बैंकों की संबद्धता, किसान क्रेडिट कार्ड (केसीसी) की शुरुआत, बिजनेस फैसिलिटेटर तथा बिजनेस कॉरेस्पांडेंट मॉडल के लिए विनियामक अनुमोदन तथा 'नो फ्रिल' खातों की शुरुआत करना।

21. इस संबंध में आगे काफी कुछ किया जाना है। यहां तक कि 145 मिलियन परिवार अथवा भारत की आबादी का लगभग 43 प्रतिशत हिस्सा अभी भी बैंकिंग सुविधा से वंचित है। क्षेत्रीय असंतुलनों ने समस्या को और जटिल बना दिया है। वित्तीय समावेशन संबंधी समिति की रिपोर्ट (अध्यक्षः डॉ. सी.रंगराजन) के अनुसार उत्तर पूर्वी क्षेत्र के 95 प्रतिशत किसान परिवारों की औपचारिक बैंकिंग तक पहुंच नहीं है। अखिल भारतीय स्तर पर 49 प्रतिशत किसान परिवार ऋणग्रस्त हैं जबकि औपचारिक स्रोतों से लिये गये ऋण का स्तर कम अर्थात 27 प्रतिशत है। लगभग 10 प्रतिशत लोगों के पास जीवन बीमा की सुरक्षा है। 90 प्रतिशत से अधिक गांवों में अभी भी बैंक शाखाएं नहीं हैं। देश के कई हिस्सों में बैंक माइक्रोफाइनांस संस्थाओं (एमएफआइ) के साथ मिलकर वंचित लोगों तक सुविधा उपलब्ध कराने का प्रयास कर रहे हैं। तथापि चुनौती काफी बड़ी है तथा इसके लिए मुख्यधारा की संस्थाओं को आगे आने की जरूरत है।

22. कृषि क्षेत्र में पूंजी के निर्माण की प्रक्रिया में पुनः तेजी आई है, हालांकि मुख्यधारा की उधार देने वाली संस्थाएं इस प्रक्रिया को आगे बढ़ाने के लिए और अधिक प्रयास कर सकती हैं। स्थिर कीमतों (2004-05) के आधार पर कृषि तथा संबद्ध कार्यकलापों में पूंजी निर्माण 78,848 करोड़ रुपए से बढ़कर 2008-09 में 1,38,597 करोड़ रुपए हो गया। 76 प्रतिशत की यह वृद्धि सभी उद्योगों के 51 प्रतिशत की वृद्धि के मुकाबले बेहतर है। तथापि कृषि क्षेत्र की जो संभावनाएं हैं उनके मुकाबले हमारी वृद्धि कम है। वैश्विक मानकों की तुलना में भारत की कृषि पैदावार काफी कम है। 10 वर्ष पहले के 1704 किलोग्राम / हैक्टर की तुलना में 2009-10 में भारत की प्रति हैक्टर खाद्यान्न पैदावार का स्तर मामूली बढ़कर 1798 किलोग्राम / हैक्टर हो गया है जो 4168 किलोग्राम / हैक्टर के वैश्विक औसत की तुलना में काफी कम है। मिश्र में धान की पैदावार 9731 किलोग्राम / हैक्टर है जबकि यूके में गेहूं की पैदावार 8281 किलोग्राम / हैक्टर है। उत्पादन के लिए जहां पूंजी की जरूरत काफी होती है वहीं प्रौद्योगिकी, निवेश तथा संस्थागत व्यवस्थाओं की भी जरूरत पड़ती है। केवल निविष्टियों के रूप में पूंजी में अंतर के कारण पैदावार में अंतर नहीं आता। उन कारणों को बेहतर ढंग से समझने की जरूरत है जिनके चलते पंजाब की तुलना में उत्तर प्रदेश की पैदावार 56 प्रतिशत और बिहार की पैदावार केवल 42 प्रतिशत है। महाराष्ट्र की पैदावार पंजाब की पैदावार का महज 24 प्रतिशत है। कृषि कारोबार से जुड़े नेतृत्व को क्षेत्रीय स्थितियों को ध्यान में रखते हुए राज्य सरकारों के साथ मिलकर काम करना चाहिए। तभी हम आपूर्ति में वृद्धि के जरिए कृषि क्षेत्र की विकास दर को बढ़ा सकते हैं।

बेहतर अभिशासन के जरिए वितरण मॉडल में बेहतरी लाना

23. पिछले दशक के दौरान वृद्धि के विषय से जुड़े सिद्धांतवादियों तथा विकास विशेषज्ञों ने यह अनुभव किया कि वृद्धि की दर को आगे बढ़ाने में अभिशासन की भूमिका महत्त्वपूर्ण है। अच्छे अभिशासन का आशय ऐसी अच्छी तथा कार्यक्षम व्यवस्था से है जिसके अंतर्गत विनियामक तथा कानूनी ढांचे सहित संस्थागत व्यवस्था की समग्र प्रक्रिया शामिल होती है जो वस्तुओं तथा सेवाओं की समग्र श्रृंखलाओं के लिए किफायती वितरण मॉडल सुनिश्चित करने के लिए आवश्यक है। हमने भारत में इस दिशा में पिछले दो दशकों में कई संस्थाओं की स्थापना की। तथापि अभिशासन संबंधी मानदंडों के अनुसार हम काफी पीछे हैं। कौफमैन, क्राये तथा मस्त्रुजी द्वारा विकसित विश्व बैंक के विश्वव्यापी अभिशासन संकेतक (डब्ल्यूजीआइ) के अनुसार विचाराधीन संकेतकों के आधार पर 2009 में भारत का स्थान लगभग 46 प्रतिशतक (पर्सेंटाइल) था जिसका आशय था कि अध्ययन किए गए 210 देशों में से आधे से अधिक देशों का स्थान अभिशासन की दृष्टि से भारत से बेहतर था। अभिशासन के संबंध में हमारी जो कमियां हैं उन्हें हम शीघ्र निर्णय लेकर तथा हाथ में ली गई सभी परियोजनाओं का कार्यान्वयन शीघ्रता से करके कम कर सकते हैं; चाहे वह सामाजिक सुरक्षा से जुड़ी योजनाएं हों या सामाजिक ढांचा, सड़क, अन्य परिवहन अथवा पावर या संचार परियोजनाएं।

24. बेहतर अभिशासन के लिए सरकारी तथा निजी भागीदारी (पीपीपी) की ऐसी भूमिका की जरूरत है जो दोनों के लिए लाभदायक हो। जहां एक ओर कारोबार करने के लिए उपलब्ध वातावरण में और सुधार की जरूरत है वहीं कारोबारी नेतृत्वकर्ताओं को परियोजनाओं में निवेश से मिलने वाले लाभ पर अधिक ध्यान देना चाहिए तथा जमीनी स्तर पर योजनागत निवेश तथा वास्तविक पूंजी-निर्माण के बीच के अंतर को पाटना चाहिए। विश्व बैंक के 2009 के आंकड़ों के अनुसार भारत में कानूनी तौर पर कारोबार शुरू करने की प्रक्रिया पूरी करने में औसतन 30 दिन लगते हैं जिसके अनुसार 182 देशों के बीच इसका स्थान 113वां है। 29 देशों में कारोबार की शुरुआत करने के लिए एक सप्ताह अथवा उससे कम समय लगता है। इस संबंध में न्यूजीलैंड सबसे ऊपर है जहां आप केवल एक दिन में कारोबार शुरू कर सकते हैं। ऑस्ट्रेलिया में 2 दिन लगते हैं तथा सिंगापुर में 3 दिन। इसी प्रकार करों की गणना करने तथा इसका भुगतान करने में 271 घंटे लगते हैं जिसके अनुसार 182 देशों के बीच भारत का स्थान 114वां है। दिवालियापन के समाधान के क्षेत्र में भारत की स्थिति और भी खराब है। भारत में न्यायालय के जरिए विवादित संपत्ति के समाधान के जरिए दिवालियेपन के निपटारे में औसतन 7 वर्ष लगते हैं। इस दृष्टि से 156 देशों के बीच भारत का स्थान 155वां है जो केवल मॉरिटानिया से ऊपर है जबकि संकटग्रस्त आयरलैंड में केवल 0.4 वर्ष लगता है तथा 54 अन्य देशों में दो वर्ष या उससे कम समय लगता है।

25. हम चाहे सरकारी क्षेत्र में या निजी क्षेत्र में कार्यरत हों या निजी तौर पर कार्य कर रहे हों, यदि हम पूरी क्षमता से कार्य करें तो अभिशासन तथा वितरण की प्रणाली में सुधार आ सकता है। हम कुछ अति उत्तम मूलभूत ढांचे के निर्माण की शुरुआत तो कर देते हैं, परंतु कई बार ऐसी परियोजनाएं पूरी होने में एक दशक से भी अधिक का समय लग जाता है। मूलभूत ढांचे के निधीयन के लिए वित्त की कमी नहीं है। मूलभूत ढांचा वित्त उद्योग के विशेषज्ञ मुझे कहते हैं कि वाणिज्यिक दृष्टि से व्यवहार्य ऐसी कोई परियोजना वित्तपोषण की कमी के कारण रुकी हुई नहीं है जिनके संबंध में जरूरी अनुमोदन प्राप्त हो गया हो तथा जरूरी निविष्टियां उपलब्ध हों। ढांचागत निवेश को बढ़ाने के प्रयासों में कोई कमी नहीं है। व्यवहार्यता अंतर निधीयन (वीजीएफ), ढांचागत वित्त कंपनियों द्वारा अधिक-से-अधिक वित्तपोषण, टेकआउट फाइनेंसिंग, मानक रियायत करार, वार्षिकी आधारित निधीयन आदि इसके कुछ उदाहरण हैं। आज की जो जरूरत है वह त्वरित कार्यान्वयन की प्रतिबद्धता की है। विनिर्माण क्षेत्र में अभी भी भारी खामियां हैं। अभी भी हमारी जरूरत से 9 प्रतिशत कम ऊर्जा उपलब्ध है। संचार तथा वितरण में अनुमानित 40 प्रतिशत की भारी हानियों तथा प्रतिस्पर्धा की कमी ने बिजली उद्योग को प्रभावित किया है। बिजली चली जाने से उत्पादन में कम-से-कम 7 प्रतिशत की हानि होती है। इसके परिणामस्वरूप 542 किलोवाट प्रति घंटे प्रति व्यक्ति बिजली की खपत अमरीका की तुलना में केवल 4 प्रतिशत तथा आयरलैंड की तुलना में 1.5 प्रतिशत है। मूलभूत ढांचे की कमियां दूर होने की गति काफी धीमी है तथा हमें अपनी योजनाओं के कार्यान्वयन में तेजी लानी होगी। स्वर्णिम चतुर्भुज परियोजना तथा एनएचडीपी चरण III के रूप में हमने काफी कुछ प्राप्त कर लिया है, परंतु प्रति दिन 20 किलोमीटर की सड़क बनाने के महत्वाकांक्षी तथा अत्यावश्यक लक्ष्य के बावजूद सड़क की उपलब्धता अभी भी काफी कम है।

26. निष्ठा तथा दूरदृष्टि वाले कारोबारी नेतृत्व से हमारे अभिशासन के स्तर में सुधार आ सकता है। ऐसे कई क्षेत्र हैं जिनमें अभिशासन में सुधार किया जा सकता है। ये क्षेत्र सामाजिक सुरक्षा मुहैया कराने से लेकर हमारे कारोबार के अधिकांश क्षेत्रों में कंपनी अभिशासन स्थापित करने तक फैले हुए हैं। हम अपनी अभिशासन व्यवस्था में सुधार लाकर वृद्धि दर में कम-से-कम 1 प्रतिशत का सुधार आसानी से ला सकते हैं। हम राजकोषीय घाटा सहित कई अन्य आर्थिक मानदंडों में भी काफी सुधार कर सकते हैं। हमें जिस बात का ध्यान रखना है वह यह है कि हम एक ऐसी वितरण व्यवस्था की स्थापना करें, जिससे हरेक क्षेत्र में परियोजनाओं के कार्यान्वयन में तेजी लायी जा सके।

नेतृत्व प्रदान करना

27. वृद्धि के संबंध में अर्थशास्त्रियों ने अभिशासन संबंधी मुद्दों को तो काफी अधिक महत्त्व दिया परंतु नेतृत्व की भूमिका को नजरंदाज किया। नेतृत्व संबंधी मुद्दों को प्रबंधन विशेषज्ञों का क्षेत्र माना गया। तथापि मेरे विचार में समाज की अभिवृद्धि तथा विकास में नेतृत्व की भूमिका महत्त्वपूर्ण होती है। सही नेतृत्व के जरिए कई बातों को सुनिश्चित किया जा सकता है जिनमें समावेशी वृद्धि, पर्यावरण के अनुकूल वृद्धि, बेहतर अभिशासन, उद्यमशीलता, आर्थिक स्थिरता, शांति तथा सामाजिक सौहार्द शामिल हैं। ये सभी मिलकर अंततः एक ताकत के रूप में कार्य करते हैं जिनसे न केवल वृद्धि होती है बल्कि इससे आर्थिक कायापलट भी होता है। हमें इस समय राजनीतिक नेतृत्व, कारपोरेट नेतृत्व, प्रबंधकीय नेतृत्व तथा सामाजिक नेतृत्व की जरूरत है। इन सभी क्षेत्रों में हमें ऐसे नेतृत्व की जरूरत है जो अपने क्षेत्र में बदलाव ला सके। नेतृत्व के बिना हम कुछ समय के लिए पारंपरिक तरीके से आगे बढ़ सकते हैं परंतु अंततः हम भटक जाएंगे।

28. हम शैक्षिक सेवा उपलब्ध कराने के आम मामले का उदाहरण ले सकते हैं। हमारे प्रधानमंत्री डॉ. मनमोहन सिंह ने वृद्धि तथा विकास संबंधी हमारी रणनीति में शिक्षा के महत्त्व को समझते हुए कहा है कि ऐसी क्या बात है कि ज्ञान की इस शताब्दी में हमारी आबादी का एक-तिहाई हिस्सा अभी भी अशिक्षित है। हमारे नाम यह कलंक भी है कि दुनिया के अशिक्षितों का एक-तिहाई हिस्सा भारत में रहता है। हमारे

देश में कारोबार जगत में तथा अन्य क्षेत्रों में कई नेता हैं जो राष्ट्रीय शिक्षा को एक मिशन बनाकर उससे जुड़ सकते हैं और एक सामाजिक दायित्व मानते हुए अशिक्षा को दूर करने की चुनौती स्वीकार कर सकते हैं।

29. प्रतिभासंपन्न बंगाली विद्वान अमर्त्य सेन ने माना है कि विकास के स्तर में समुचित सुधार न होने का कारण है सामान्य शिक्षा तक पहुंच का न होना। मेरे विचार में यह दुःख की बात है कि हम संविधान के अनुच्छेद 45 का अनुपालन अभी भी नहीं कर पाए हैं जिसमें हमारे गणतंत्र बन जाने के 10 वर्ष के अंदर 14 वर्ष से कम आयु तक के बच्चों को निःशुल्क तथा अनिवार्य शिक्षा देने की बात कही गई है। यह स्थिति उस देश की है जहां राजा राममोहन राय, स्वामी विवेकानंद, सर सैयद अहमद खान, महर्षि महेश योगी तथा सर्वपल्ली राधाकृष्णन जैसे लोग हुए हैं। क्या हमने अपने लोभ, बोनस तथा नौकरशाही के अधिकार के लिए अपने नेतृत्व के गुण को समाप्त कर दिया है? क्या हम ऐसे नए समाधान नहीं ढूंढ़ सकते जिसके माध्यम से शिक्षा की विभिन्न विधाओं में अधिक संख्या में सर्वोत्कृष्ट संस्थानों का निर्माण करते हुए सभी को प्रारंभिक शिक्षा देने के लिए उपयुक्त आर्थिक आधार प्रदान किया जा सके?

30. वर्तमान में देश में 300 मिलियन से भी अधिक वयस्क व्यक्ति अशिक्षित हैं। सर्व शिक्षा अभियान तथा मध्याह्न भोजन की योजनाओं के चलते प्राथमिक तथा प्रारंभिक शिक्षा के स्तर पर बीच में ही पढ़ाई छोड़ने की दर में गिरावट आ रही है, परंतु अभी भी उक्त दो स्तरों में यह दर क्रमशः 25 प्रतिशत तथा 40 प्रतिशत है। आज लगभग सभी ग्रामीण आबादी में कम-से-कम एक प्राथमिक विद्यालय है। तथापि हमारे 40 प्रतिशत प्राथमिक विद्यालयों में अभी भी शौचालय नहीं हैं या उनकी चारदीवारी नहीं है। प्राथमिक से लेकर उच्चतर स्तर तक शिक्षा की गुणवत्ता में काफी सुधार किया जाना है। इस दिशा में कारोबारी नेतृत्व को आगे आना चाहिए तथा सार्वजनिक नीति ऐसी होनी चाहिए कि निजी क्षेत्र शिक्षा जगत में निवेश करने के लिए आगे आ सके। ऐसा निवेश न केवल लाभजनक इंटरनेशनल बक्का-लौरेट (आइबी) स्कूलों में हो बल्कि यह शिक्षा के क्षेत्र में विद्यमान अंतर को कम करने के लिए तथा तकनीकी एवं कौशल संवर्धन से जुड़ी शिक्षा के क्षेत्र में भी हो।

31. यदि भारत को विश्व की ज्ञान आधारित अर्थव्यवस्था के रूप में सही मायने में उभरकर आना है तो कारोबारी नेतृत्व को तकनीकी शिक्षा तथा कौशल के विकास में भागीदारी करनी होगी। व्यावसायिक शिक्षा और प्रशिक्षण के जरिए यदि श्रमिकों की आपूर्ति में बढ़ोतरी होती है तो इसका सबसे अधिक लाभ कारोबारी नेतृत्व को ही होगा। औद्योगिक प्रशिक्षण संस्थान (आइटीआइ) केवल सरकार के नियंत्रण में न होकर सरकारी व निजी क्षेत्र की भागीदारी(पीपीपी) में होने चाहिए। प्रतिवर्ष लगभग 7 मिलियन अथवा इससे कुछ अधिक कामगार बाजार में उतरते हैं जिनमें से 10 प्रतिशत से भी कम प्रशिक्षित कामगारों की आपूर्ति आइटीआइ कर पाता है। भारत में नियोजित किए जाने वाले आइटी और बीपीओ प्रोफेशनलों की कुल संख्या में हाल में लगभग 0.2 मिलियन प्रतिवर्ष की दर से बढ़ोतरी हो रही है। हमारे पास प्रशिक्षण देने वाले लोगों की आपूर्ति पर्याप्त संख्या में नहीं है। अतः नेतृत्व को चाहिए कि वे आइआइटी व आइटीआइ दोनों की संख्या में बढ़ोतरी करने के लक्ष्य को एक चुनौती के रूप में लें।

32. कारोबारी नेतृत्व को अपने अंदर भी झांककर देखना चाहिए। ऐसे समय में जहां कारोबारी नेतृत्व ऋण की पुनर्संरचना के लिए बार-बार बैंकों की ओर देखता है, वहीं इतिहास में कई ऐसे उदाहरण भी हैं जहां कारपोरेट नेतृत्व ने स्वयं ही नवोन्मेषी समाधान ढूंढ निकाला है। अमरीका के हवाई जहाज उद्योग का ही उदाहरण लें। अपने अस्तित्व के 90 वर्षों के दौरान इसने भारी उतार-चढ़ाव देखे हैं। शुरुआती दौर में अपहरणकर्ताओं अथवा अतंकवादियों का कोई भय नहीं था, फिर भी कंपनियां लोगों को टिकट बेचने में मुश्किलों का सामना कर रही थीं क्योंकि लोग मानते थे कि हवाई जहाज से यात्रा करना अपने आप में खतरनाक है। 1978 तक उद्योग पर सरकार का अत्यधिक नियंत्रण भी था, परंतु बाद में जब नियंत्रणों को पूरी तरह से समाप्त कर दिया गया तो उसके साथ प्रतिस्पर्धा का एक नया दबाव आ गया। मैं आप सभी को 'ह्वाट दि एयरलाइन इंडस्ट्री कैन टीच अस अबाउट लीडरशिप' नामक पुस्तक पढ़ने का आग्रह करता हूं जिसे हार्वर्ड बिजनेस स्कूल के अंथनी जे. मायो तथा नितिन नोहरिया तथा एक भूतपूर्व रिसर्च एसोशिएट मार्क रेन्नेला ने संयुक्त रूप से लिखा है। पुस्तक की भूमिका में लेखक लिखते हैं 'लीडर परिवर्तन के ऐसे कारक होते हैं जो ऐसी स्थितियों में भी अवसर तथा संभावनाएं देख पाते हैं जहां अन्य व्यक्तियों को केवल असफलता दिखाई देती है'। विमानन के कारोबारी चक्र के प्रत्येक पड़ाव - प्रारंभ, वृद्धि, परिपुष्टि, गिरावट, पुनर्जीवन - में नए प्रकार का नेतृत्व उभरकर आया है। उद्योग के अपने जीवन-चक्र के विभिन्न दौर से गुजरते समय चाहे इन लीडरों ने नेतृत्व के विभिन्न स्वरूप का प्रतिनिधित्व किया हो, परंतु वे स्वयं पर इतना भरोसा करते थे कि खुद को विजेता मानते थे और वे बचाव हेतु किसी की शरण में जाने से बचते रहे।

33. दोस्तो, हमने पिछले दो-तीन दशकों के दौरान काफी अच्छा कार्य किया है। परंतु हम इससे भी बेहतर कर सकते हैं। तो क्यों न इसे चुनौती के रूप में लें ? इस संदर्भ में मैं आप सभी का ध्यान अधिक समावेशी वृद्धि, बेहतर अभिशासन तथा बेहतर नेतृत्व की जरूरत की ओर आकर्षित करता हूं। हमें कई क्षेत्रों में उच्चतर निवेश की ओर ध्यान देने की जरूरत है जिनमें कृषि तथा ग्रामीण क्षेत्र, शिक्षा तथा

कौशल विकास, बेहतर स्वास्थ्य सेवाएं शामिल हैं, साथ ही परियोजनाओं को शीघ्रता से पूरा करके यथाशीघ्र उसका लाभ उठाने के जरिए ढांचागत निवेश में बढ़ोतरी करने की भी जरूरत है। इन सब प्रयासों से हम 10 प्रतिशत की वहनीय वृद्धि दर हासिल कर सकते हैं, परंतु ऐसा करते समय हमें संकीर्ण कारोबारी स्वार्थ से ऊपर उठना होगा। सुस्थिर समष्टि अर्थव्यवस्था तथा गतिशील वित्तीय प्रणाली के रूप में हमारे पास एक समर्थनकारी वातावरण पहले से उपलब्ध है, परंतु इसके लिए बेहतर अभिशासन का होना अत्यावश्यक है। हमारे अंदर हाथी का बल तथा बाघ का साहस है। हमें ऐसे नेतृत्व की जरूरत है जो न केवल हमें बल्कि सभी को एक-साथ वृद्धि के उच्चतर स्तर तक लेकर जा सके ताकि हममें से प्रत्येक व्यक्ति इन प्रयासों का साझेदार बनकर इससे प्राप्त होने वाले फल को चख सके। अपने इन विचारों को आपके बीच बांटते हुए मैं आपसे विदा लेता हूं। आशा है आगे आप भविष्य में वहनीय तथा समावेशी दो-अंकीय वृद्धि के लक्ष्य की प्राप्ति हेतु आवश्यक नीतिगत अनिवार्यताओं तथा नेतृत्व के विभिन्न आयामों पर चर्चा करेंगे।